4

कथा साहित्य
वेताल पच्चीसी-1

ध्यान दें:

संस्कृत वाङ्मय में कथा ग्रन्थों का बड़ा स्थान है। कथा ग्रन्थों को आख्यायिका इस शब्द से भी जाना जाता है। प्रवृत्ति के भेद से आख्यान साहित्य के दो भाग होते हैं। उपदेशात्मक कथा अथवा नीति कथा, लोक कथा अथवा मनोरंजन कथा। नीति कथाओं में उपदेश की प्रवृत्ति प्रधान होती है। लोक कथाओं में मनोरंजन की प्रवृत्ति। पुनः लोक कथाओं में प्रायः पात्र रूप में मनुष्य होते हैं। जैसे वेताल पंचविंशति। नीति कथाओं में पशु पक्षी जैसे पंचतन्त्र। वेताल पंचविंशति के कर्ता शिवदास कहलाते हैं। इन कथाओं को पढ़ने से हमें बोध होता है। कथा सरित्सागर, बृहत्कथामंजरी, भोजप्रबन्ध, पंचतन्त्र, कथा मुक्तावली, कथा मंजरी, जातक माला, वेताल पंचविंशति इत्यादि कथा ग्रन्थों में अग्रगण्य हैं। इस पाठ में वेताल पंचविंशति नामक ग्रन्थ से कथा को लिया गया है। इस कथा को पढ़कर आपको मनोरंजन, कर्तव्य और अकर्तव्य का भी बोध होगा।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे:

- संस्कृत कथा के विषय में जान पाने में;
- विशेषणों के प्रयोग प्रकारों को जान पाने में;
- विविध प्रकार के तिङन्त पदों को जान पाने में;
- सन्धि समासादि के व्यवहार को जान पाने में;
- अनेक प्रकार की नीति और उपदेशों का अपने जीवन में पालन कर पाने में;
- सबसे महत्वपूर्ण कथा को पढ़कर आनन्द प्राप्त कर पाने में;

4.1) अनंगरति का पति कौन हो?

4.1.1) कथामुख

क्षान्तिशील कोई मूर्ख भिक्षु राजा विक्रमादित्य से वेताल को उपहार में मांगने और विद्याधर समृद्धि

ध्यान दें:

को प्राप्त करने के लिए राजा विक्रमादित्य को प्रत्येक दिन एक फल देता था। वस्तुत: वह फल रत्न ही था। राजा ने इस प्रकार के दानादि से सन्तुष्ट और मुग्ध होकर भिक्षु को पूछा किसलिए इतने मूल्यवान उपहार देते हो। तब आपकी सहायता की आवश्यकता है ऐसा कहकर उस भिक्षु ने राजा विक्रमादित्य को श्मशान की ओर वेताल को लाने के लिए भेजा। विक्रमादित्य ने श्मशान जाकर वेताल को शीशम के पेड़ पर देखा। वहाँ से बिना भयभीत हुए वह उस वेताल को लेकर भिक्षु के समीप आ रहा था। तब वेताल ने कहा- राजा तुम बिना उद्देश्य के ही इस कार्य में लगे हो। तुमको मार्ग में परेशानी का अनुभव न हो वैसी आनन्द देने वाली कथा को सुनाता हूँ। कथा के बाद एक प्रश्न को पूछूँगा। यदि उत्तर ज्ञात होते हुए भी तुमने नहीं दिया तो तुम्हारी मृत्यु होगी। यदि उचित उत्तर दिया तो मैं पुन: शीशम के वृक्ष पर चला जाऊँगा। इस प्रकार राजा उसके पूछे प्रश्न का उत्तर देता है। फिर वेताल पुन: शीशम के वृक्ष पर चला जाता है। राजा पुन: उसे लाने के लिए जाता है। आते समय पुन: कथा आरम्भ। पुन: प्रश्न-उत्तर और वेताल का जाना। अन्त में राजा वेताल के द्वारा मरने से ग्रन्थ की समाप्ति।

4.1.2) पूर्वपीठिका

कन्या दूसरें के धन के समान है। अर्थात् जैसे दूसरे का न्यासरूप में रखा गया धन वैसे ही पिता के पास कन्या भी पति के न्यासरूप में होती हैं। वहाँ कन्या को देने से पिता का उसके ऊपर अधिकार नहीं रहता। इसलिए भारतीय परम्परा में कन्यादान का बड़ा स्थान है। योग्य वर को खोजकर उसे पिता अपनी कन्या को देता है। जैसे पुत्री को सुख होता है वैसे ही पिता को भी पुण्य होता है। इस कथा में उसी प्रकार का ही कन्यादान वर्णित है। यहाँ कन्या को अपनी पत्नी के रूप में प्राप्त करने के लिए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र आए। उनमें किसे पिता कन्या को दें ऐसा जानने के लिए ही वेताल ने इस कथा को विक्रमादित्य के लिए सुनाया।

4.2 मूलपाठ

4.2.1 विभाग-1

राजा शिंशपान्तिकं गत्वा तं वेतालं स्कन्धेनादाय प्रस्थितस्तेन वेतालेन प्राग्वदभ्यधायि - राजन्, कथस्मिन् श्मशाने निशि ते एतादृक् प्रयास:। भूतसंकुलं रात्रिभीषणं चिताधूमैरिव ध्वान्तैर्निरुद्धं पितृकाननं किं नेक्षसे। तस्य भिक्षोरनुरोधत: कथमीदृशा प्रयासेन आत्मानं खेदयसि। तदिमं में प्रश्नं मार्गविनोदकं श्रृणु-

अवन्तीषु देवनिर्मिता शैवी तनुरिव उद्दामभोगभूतिविभूषिता पद्मावती भोगवती हिरण्यवतीति च कृतादिषु त्रिषु युगेषु पुरी क्रमश: आसीत्। कलौ च उज्जयिनीति पुरी अस्ति, तस्यामासीद् वीरदेवो नाम नृपति:, तस्य पद्मारतिनाम्नी महादेवी आसीत्।

व्याख्या: वह राजा विक्रमादित्य शीशम के वृक्ष के पास गया, जाकर उस वेताल को कन्धे पर लेकर चला। उस वेताल के द्वारा पहले की तरह कहा गया- महाराज, क्यों रात के समय इस श्मशान में तुम्हारा इस प्रकार का प्रयास है। क्यों तुम प्रेतों से भरे हुए, चिता धुएँ की तरह अन्धकारों से भरे हुए, रात्रि के कारण भयंकर इस श्मशान को नहीं देखते हो। उस सन्यासी के अनुरोध से क्यों इस प्रकार के प्रयास से अपने को क्लेशित करते हो। इसलिए रास्ते का मनोरंजन करने वाला मेरा प्रश्न सुनो-

अवन्ती देश में देवता से बनायी हुई उद्धत सर्प शरीर तथा विभूति से विभूषित शंकर जी के शरीर के समान उद्धत भोगविलास तथा सम्पत्ति से विभूषित क्रमश: पद्मावती सत्युग में, भोगवती त्रेतायुग में तथा हिरण्यवती द्वापर युग में नगरी थीं। कलियुग में तो उज्जयिनी नगर है। उसमें वीरदेव नाम का राजा था,

उसकी पद्मारति नाम की महारानी थी।

सरलार्थः- राजा शीशम के वृक्ष से वेताल को लेकर भिक्षु के पास जाता था। तब उस वेताल ने राजा को पूछा कि कैसे वह राजा भूतपिशाच आदि से व्याप्त श्मशान को आकर इस प्रकार का प्रयास करता है। कैसे वह भिक्षु के अनुरोध से कार्य में व्यस्त है। वहाँ से उस वेताल ने कथा को सुनाया।

पहले उज्जयिनी नाम की नगरी थी। वह नगरी भगवान महादेव के शरीर के समान भोगविलास और सम्पत्ति से विभूषित थी। उसका सतयुग में पद्मावती नाम, त्रेतायुग में भोगवती नाम, द्वापरयुग में हिरण्यवती नाम था। और कलयुग में उसका उज्जयिनी नगरी नाम है। वहाँ वीरदेव नाम का राजा था। उसकी पत्नी का नाम पद्मारति था।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

1. शिंशपान्तिकम् - शिंशपायाः अन्तिकम्, षष्ठी समास।
2. चिताधूमैः - चितायाः धूमः, तैः षष्ठी समास।
3. ईक्षसे - ईक्ष दर्शने इति आत्मनेपदी धातु लट्लकार मध्यम पुरुष एकवचन।

4.2.2 विभाग-2

एकदा राजा तया साकं मन्दाकिनीतटे पुत्रकाम्यया तपसा हरमाराधयामास, चिरंच तपश्चरन् कदाचित् परितुष्टशंकरोदिताम् आकाशवाणीं शुश्राव- 'राजन्, उत्पत्स्यते ते पुत्रः शूरः कुलोद्वहः, कन्या चौका लावण्येन जिताप्सराः।' एतां नाभसीं वाणीं श्रुत्वा स भूपतिरभीष्टसिद्धिप्रहृष्टो महिष्या समं स्वनगरीमाययौ। तस्य प्रथमं पद्मारत्यां देव्यां शूरदेवो नाम पुत्रः, तदनु च अनंगरतिर्नाम अनंगमोहिनी कन्या समजायत। क्रमेण च तस्यां वृद्धिं गतायां स राजा सदृशं वरं प्रेप्सुः पृथिवीमण्डलस्थान् सर्वान् नृपतीन् पटलिखितानानाययत्। यदा तेषु एकोऽपि तस्याः सदृशो न प्रत्यभासत, तदा स राजा वात्सल्यात् तां सुतामभाषत- ''वत्से, अहं तावत् ते सदृशं वरं न पष्यामि, तत् सर्वान् नृपान् समानाय्य स्वयंवरं कुरुष्व।'' एतत् पितृवचनमाकर्ण्य सा राजपुत्री जगाद-''तात, स्वयंवरम् अतिह्रेपणं, तदहं नेच्छामि, यो हि युवा सुरूपः केवलं पूर्णं विज्ञानं वेत्ति, तस्मै त्वया अहं देया, न्यूनाधिकेन में नास्ति प्रयोजनम्।''

व्याख्याः एक बार राजा पद्मारति के साथ मन्दाकिनी नदी के तट पर पुत्र की कामना से तपस्या के द्वारा शंकर जी की अराधना करने लगा। चिरकाल तक तपस्या करते हुए किसी समय उससे सन्तुष्ट हुए शंकर जी के द्वारा कही हुई आकाशवाणी सुनी- राजा तुम्हारे पुत्र उत्पन्न होगा जो कि वीर होगा और कुल की मर्यादा को वहन करेगा। और एक कन्या अपने लावण्य से अप्सराओं को जीतने वाली होगी। इस आकाशवाणी को सुनकर मनोरथ पूर्ण होने से प्रसन्न होकर वह राजा महारानी के साथ अपने नगर को आया। पद्मारति देवी के गर्भ से पहले शूरदेव नाम का पुत्र और पश्चात् अनंगरति नाम की कामदेव को मोहित करने वाली कन्या उत्पन्न हुई। क्रमशः उसके यौवनावस्था प्राप्त करने पर उस राजा ने उसके सदृश वर प्राप्त करने की इच्छा से पृथ्वी पर रहने वाले सभी राजाओं के चित्र मंगवाये। जब उनमें से एक भी उसके सदृश न मालूम हुआ, तब उस राजा ने स्नेह से उस पुत्री को कहा- हे पुत्री मैं तो तुम्हारे सदृश वर नहीं देखता हूँ, इसलिए सभी राजाओं को बुलाकर स्वयंवर करो। इस प्रकार पितृ वचन को सुनकर उस राजकुमारी ने कहा, पिताजी स्वयंवर तो अत्यन्त लज्जाजनक कार्य है, वह मैं नहीं चाहती हूँ। जो युवक केवल एक विज्ञान को पूर्ण जानता हो आप के द्वारा मैं उसी को दी जाऊँ। कम या अधिक से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है।

ध्यान दें:

ध्यान दें:

सरलार्थः - वह राजा अपुत्रक था। इसलिए उसने पत्नी के साथ पुत्र प्राप्ति के लिए मन्दाकिनी नदी के तट पर शिव की अराधना को किया। उसकी तपस्या से सन्तुष्ट होकर शिव ने वर रूप में कहा कि उसके एक शूर पुत्र और एक अतिसुन्दरी कन्या होगी। फिर उसके पद्मारति से एक पुत्र और एक अति रमणीय कन्या का जन्म हुआ। उसके पुत्र का नाम शूरदेव और कन्या अनंगरति थी। उसका इस प्रकार का रूप था जिससे कामदेव भी मोहित हो जाए। उसने क्रम से यौवनावस्था को प्राप्त किया। उसे योग्य वर को देने के लिए उसने राजाओं को बुलाया। परन्तु उसके सदृश एक भी नहीं था। पिता ने उस अनंगरति को कहा कि उसके सदृश वर नहीं दिखाई दिया। इसलिए स्वयंवर करना चाहिए। तब उसने कहा की स्वयंवर से बहुत धन व्यय होगा। इसलिए वह अपेक्षित नहीं है। उसने कहा कि- जो रूप सम्पन्न पुरुष हो और पूर्ण विज्ञान को जानता हो उससे ही उसका विवाह होगा।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- परितुष्टशंकरोदिताम् - तृतीयातत्पुरुष समास।
- आराधयामास - आ + राध् धातु, लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
- उत्पत्स्यते - उत + पत् धातु, लृट्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
- अभीष्टसिद्धिप्रहृष्टः - तृतीया, तत्पुरुष समास।
- अनंगमोहिनी - अनंग कामदेवम् अपि मोहयति या सा इति विग्रहः।
- समजायत - सम् + जन् धातु, लङ्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
- जगाद - गद् धातु, लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
- आययौ- आ + या धातु, लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।

4.2.3 विभाग-3

इति दुहितुर्वचः समाकर्ण्य यावत् स भूपतिस्तादृशं वरम् अन्विष्यति, तावत् तत् लोकमुखात् विदित्वा चत्वारो वीरा विज्ञानिनो भव्याः पुरुषा दक्षिणपथात् तं राजानमाययुः। ते च राज्ञा सत्कृताः एकैकशः स्वं स्वं विज्ञानं राजसमक्षं शशंसुः। तेषामेको जगाद- ''अहं तावत् शूद्रः नाम्ना पंचफुट्टिकः, एकोऽहमन्वहं पंच अग्र्याणि वसनयुग्मानि करोमि, तेषामेकं देवाय प्रयच्छामि, एकं द्विजाय, एकमात्मनः कृते परिगृह्णामि, एकंच भार्यायै (या में भवति) ददामि, पंचमंच विक्रीय आहारादिकं विदधामि। तदेवं विज्ञानिने मह्यम् अनंगरतिस्ते दुहिता दीयताम् इति। द्वितीयोऽब्रवीत्-'अहं तावत् वैष्यः भाषाज्ञो नाम सर्वेषां मृगपक्षिणां रुतं वेद्मि, तदेषा राजपुत्री मह्यं दीयताम् इति। ततस्तृतीयोऽभाषत-'अहं खड्गधरो नाम भुजवीर्यशाली क्षत्रियः, खड्गविद्याविज्ञाने अस्यां क्षितौ में प्रतिमल्लो नास्ति, हे राजन्, तदेषा तनया ते मह्यं दीयताम् इति। ततश्चतुर्थोऽब्रवीत्-'राजन्, अहं तावत् जीवदत्तो नाम विप्रः, मम चैतादृशं विज्ञानमस्ति यत्, मृतानपि जन्तून् आनीय आशु जीवतो दर्शयामि, तद्वीरचर्य्यासिद्धं माम् एषा ते तनया पतिं प्रपद्यताम् इति। एवं ब्रुवतः तान् दिव्यावेशाकृतीन् पश्यन् राजा वीरदेवः सुतया दोलारूढः इवाभवत्।'

व्याख्याः पुत्री का यह वचन सुनकर जब वह राजा उस प्रकार के वर को खोजेगा, तब तक लोगों के मुख से जानकर वीर, विज्ञानी चार सुन्दर पुरुष दक्षिण देश से उस राजा के पास आए। वे लोग राजा के द्वारा सत्कार प्राप्त कर उनमें से एक एक क्रमशः अपना-अपना विज्ञान राजा के सामने बताने लगे। उनमें से एक ने कहा- मैं तो शूद्र हूँ मेरा नाम पंचफुट्टिक है। अकेला मैं प्रतिदिन पांच जोड़े वस्त्र बनाता हूँ। उनमें से एक देवता को देता हूँ। एक ब्राह्मण को, एक अपने लिए रख लेता हूँ। और एक पत्नी के

ध्यान दें:

लिए जो मेरी पत्नी होगी उसके लिए। पाचवें को बेचकर भोजनादि का प्रबन्ध करता हूँ। अतः तुम्हारी पुत्री अनंगरति इस प्रकार के मुझ विज्ञानी को दी जाए। दूसरे ने कहा- की मैं वैश्य हूँ भाषाज्ञ मेरा नाम है। सभी मृग, पशुओं तथा पक्षियों की ध्वनि को जानता हूँ। इसलिए यह राजकुमारी मुझे दी जाए। फिर तीसरे ने कहा मैं भुजाओं का बल रखने वाला खड्गधर नाम का क्षत्रिय हूँ। खड्गविद्या के विज्ञान में इस पृथ्वी पर मेरे तुल्य योद्धा कोई नहीं है। इसलिए हे राजन् तुम्हारी कन्या मुझे दी जाए। फिर चौथे ने कहा- हे महाराज मैं तो जीवदत्त नाम का ब्राह्मण हूँ। मेरा इस प्रकार का विज्ञान है की मरे हुए भी प्राणी को ला कर शीघ्र जीवित करके दिखा दूंगा। इसलिए मुझे वीरचर्या में सिद्ध पुरुष को तुम्हारी पुत्री पति रूप में स्वीकार करें। ऐसा कहते हुए उन सुन्दर वेश तथा आकार वालों को देखता हुआ राजा वीरदेव पुत्री के साथ दोला पर चढ़े हुए मन वाला हो गया।

सरलार्थः- तब उसके वचन को सुनकर पिता उसके वर की खोज में प्रवृत्त हुआ। तब एक दिन लोगों के मुख से वचन को सुनकर चार पुरुष राजा के समीप आए। उनके मध्य में एक शूद्र था। उसका नाम पंचफट्टिक था। वह प्रतिदिन पांच वस्त्र बनाता था। उनमें से एक को देवता के लिए देता था, एक ब्राह्मण के लिए, एक अपने लिए स्वीकार करता है, एक जो उसकी पत्नी होगी उसके लिए देगा और बचे हुए से भोजनादि खरीदता है। द्वितीय वैश्य था। उसका नाम भाषाज्ञ था। वह सभी मृगादि पशुओं और पक्षियों की भाषा को जानता था। तीसरा क्षत्रिय था। उसका नाम खड्गधर था। वह उचित प्रकार से तलवार चलाना जानता था। उसके जैसा खड्गधारी पृथ्वी पर दुर्लभ था। चतुर्थ एक ब्राह्मण था। उसका नाम जीवदत्त था। वह एक विशिष्ट विद्या को जानता था। वह मरे हुए प्राणियों में फिर से प्राण डाल सकत था।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

1. शशंसुः - शंसु स्तुतौ इति धातु, लिट्लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन।
2. आययुः - आ+या प्रापणे धातु, लिट्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
3. वेद्मि- विद् ज्ञाने इति, धातु लट् लकार, उत्तम पुरुष, एकवचन।
4. अब्रवीत् - ब्रुञ् व्यक्तायाम् वाचि इति धातु, लङ्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
5. अभाषत- भाष व्यक्तायाम् वाचि इति धातु, लङलकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
6. प्रतिमल्लः - प्रति प्रतिरूपः मल्लः बलीयान् प्रतिमल्लः तुल्यबलवान् प्रतियोद्धा।
7. वीररचर्य्यासिद्धम् - वीरचर्य्या वीराचारेण सिद्धम् सफलताम् गतम् प्राप्तैष्वर्यम् इत्यर्थः वीरचर्य्यासिद्धम्।
8. दिव्यावेशाकृतीन् - दिव्याः रमणीयाः वेशाः नेपथ्यानि वसनभूषणानि आकृतयः रूपाणि च येषां तान् दिव्यावेशाकृतीन् सुपरिच्छदान् सुरूपाणि इत्यर्थः, इति बहुव्रीहिसमास।

4.2.4 विभाग-4

इति कथामाख्याय वेतालः राजानमप्राक्षीत्- 'राजन्, ब्रुहि, एतेषां कस्मै कन्यैषा देया, यदि जानन्नपि में तत्त्वं न वदिष्यसि, तदा ते मूर्द्धा निश्चितं शतधा स्फुटिष्यति, यदि च सदुत्तरं दास्यसि, तदाहं पुनस्तव स्कन्धात् तमेव शिंशपातरुम् आश्रयिष्ये इति। एतदाकर्ण्य राजा तं वेतालं प्रत्यवादीत्-'योगेष्वर, भवान् केवलं कालक्षेपाय मां मौनं त्याजयति, अन्यथा कोऽयं गहनः प्रश्नः। तदुच्यताम्, शूद्राय कुविन्दाय कथं क्षत्रिया दीयते, वैष्याय च। यच्च तद्गतं मृगादिभाषाविज्ञानं, तत् कस्मिन् कार्ये उपयुज्यते। विप्रेण तेन स्वकर्मप्रच्युतेन ऐन्द्रजालिकेन पतितेन वीरमानिना किम्। तस्मात् क्षत्रियायैव खड्गधराय विद्याशौर्यशालिने सा देया इति।

ध्यान दें:

एतत्तस्य वचो निशम्य स वेतालो योगबलात् स्कन्धदेशात् सहसा अलक्षित: क्वापि जगाम। राजाऽपि तथैव तमनुययौ, सोत्साहघने हि वीरहृदये न जातु खेदोऽन्तरं लभते।।

व्याख्या- इस प्रकार कथा को सुनाकर, वेताल ने राजा विक्रमादित्य को पूछा-राजन् पहले के कहे शाप को स्मरण करके कहो कि इनमें से किसे कन्या दी जाए। यह सुनकर राजा ने उस वेताल को जबाव दिया। आप तो केवल समय नष्ट करने के लिए मेरा मौन त्याग कराते हैं, नहीं तो कौन-सा यह कठिन प्रश्न है। तो कहिए, एक शूद्र जुलाहे को कैसे क्षत्रिय कुमारी दी जाए, और उस वैश्य को भी। जो कि उसमें मृगादि की भाषा का ज्ञान है वह किस कार्य में प्रयोग किया जाएगा। ब्राह्मण भी अपने कर्म से गिरे हुए ऐन्द्रजालिक के कार्य को करता है उससे भी क्या प्रयोजन। इसलिए शौर्य विद्या वाले क्षत्रिय खड्गधर को ही वह कन्या दी जाए। उसके वचन को सुनकर वह वेताल योगबल से उसके कन्धे से एकाएक अलक्षित होकर कहीं चला गया। राजा ने भी उसी प्रकार उसका अनुसरण किया। क्योंकि उत्साह से भरे हुए वीरों के हृदय में कष्ट कभी भी अवसर नहीं प्राप्त करता है।

सरलार्थ:- इस प्रकार कथा को सुनाकर उस वेताल ने विक्रमादित्य को पूछा कि उनमें से कौन उस अनंगरति को प्राप्त करेगा। तब उसके प्रश्न को सुनकर उस विक्रमादित्य ने उत्तर दिया कि यह सरल प्रश्न है। क्योंकि कन्या क्षत्रिय है वह उच्च कुल में उत्पन्न है। उसे शूद्र को नहीं दे सकते। और वैश्य मृगादि भाषा को जानता था। पत्नी के पाणिग्रहण में उसके ज्ञान की कोई भी आवश्यकता नहीं है। और ब्राह्मण का जप ध्यान पूजादि का कार्य है। वह अपने कर्म को त्यागकर किसी अन्य कर्म में नियुक्त है। इसलिए वह भी उसे प्राप्त नहीं कर सकता है। इसलिए जो क्षत्रिय खड्गधर था। वह ही उसकी रक्षा में समर्थ है इस कारण उसे ही कन्या को देनी चाहिए। इससे उसका सारा जीवन सुखमय होगा। इस प्रकार उपयुक्त उत्तर को प्राप्त कर वह वेताल पुन: शीशम के वृक्ष की ओर गया। राजा भी पुन: उसे लाने के लिए गया। क्योंकि उत्साहपूर्ण वीरों के हृदय में कष्ट कभी भी नहीं होता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

1. अप्राक्षीत् - प्रच्छ धातु, लुङलकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
2. सोत्साहघने - बहुव्रीहिसमास।
3. निशम्य - नि + शम् धातु + ल्यप् प्रत्यय।
4. जगाम - गम् धातु, लिट्लकार, प्रथम पुरुष एकवचन।

4.2.5 प्रथम कथा का तात्पर्यार्थ-

यहाँ वेताल ने विक्रमादित्य के लिए एक कथा को सुनाया। यहाँ किसी कन्या के कन्यादान का प्रसंग है। उस कन्या को प्राप्त करने के लिए चार वर्णीय व्यक्ति आए। उनमें से एक शूद्र, एक वैश्य, एक क्षत्रिय और एक ब्राह्मण था। उन्होंने अपने-अपने कार्य को राजा से कहा। फिर राजा विचलित हुआ क्योंकि वह निश्चय नहीं कर सका कि किसको कन्या दी जाए। तब वेताल ने यह प्रश्न विक्रमादित्य को कहा। उन्होंने कहा कि क्षत्रिय से अलग सभी के अनुपयुक्त कार्य में लगे हुए थे। उनमें से कौन योग्य होगा इस प्रश्न के उत्तर में राजा ने कहा जो अपने धर्म का पालन करने वाला क्षत्रिय है उसे ही कन्या को दिया जाए। तब वेताल पुन: शीशम के वृक्ष पर गया राजा भी उसे लाने के लिए गया। इस प्रकार ही कथा समाप्त।

पाठगत प्रश्न

1. श्मशान किस प्रकार का था?
2. उज्जयिनी का राजा कौन है?
3. उज्जयिनी का सतयुग में क्या नाम था?
4. त्रेता युग में उज्जयिनी का क्या नाम था?
5. हिरण्यवती नाम किस युग में प्रसिद्ध था?
6. कलियुग में पद्मावती का नाम क्या है?
7. वीरदेव की पत्नी का नाम क्या है?
8. राजा ने पुत्र की प्राप्ति के लिए किसकी आराधना की?
9. राजा के पुत्र का क्या नाम है?
10. शिव के द्वारा दिए गए वर से उत्पन्न कन्या का क्या नाम है?
11. वह किस प्रकार का वर चाहती थी?
12. शूद्र का नाम क्या है?
13. शूद्र प्रतिदिन कितने वस्त्र बनाता था?
14. वैश्य का नाम क्या है?
15. वैश्य क्या जानता था?
16. क्षत्रिय का क्या नाम था?
17. ब्राह्मण का क्या नाम था?
18. जीवदत्त की क्या विशेषता थी?
19. विक्रमादित्य के मतानुसार किसे कन्या को दिया जाए?
20. किस प्रकार के हृदय क्लेश को प्राप्त नहीं होते?
21. वह राजा..... जाकर उस.....कन्धे पर लेकर चला।
22. क्यों इस.....रात के समय तुम्हारा इस प्रकार का प्रयास है।
23. कलियुग में .....नगरी है।
24. उज्जयिनी का था.....नाम का राजा।
25. राजा..... तट पर पुत्र की कामना से तपस्या करते हुए शंकर की आराधना करने लगे।
26. प्रथम पद्मारति के .....नाम का पुत्र हुआ।
27. वीरदेव ने कन्या..... के लिए वर को खोजा था।
28. स्वयंवर .....,वह मैं नहीं चाहती हूँ।

पाठ-4

वेताल पच्चीसी-1

ध्यान दें:

ध्यान दें:

29. परितुष्टशंकरोदिताम् इसका विग्रह लिखिए।

30. मैं तो शूद्र हूँ। मेरा नाम ..... है।

31. मैं वैश्य..... नाम वाला सभी पशु पक्षियों की भाषा को जानता हूँ।

32. मैं भुजाओं का बल रखने वाला.....क्षत्रिय हूँ।

33. मैं .....नाम का ब्राह्मण हूँ।

34. यदि जानते हुए भी नहीं बोलोगे तो तुम्हारे सिर के निश्चय ही .....टुकड़े होंगे।

35. महाराज, आप तो केवल.....मेरे मौन का त्याग करवाते हैं।

36. उत्साह से भरे हुए.....कष्ट कभी भी अवसर प्राप्त नहीं करता है।

37. स्तम्भ को मिलाओ-

	स्तम्भ-1	स्तम्भ-2
1.	श्मशान	वीरहृदय
2.	उज्जयिनी सतयुग में	खड्गधर
3.	वीरदेव की पत्नी	द्वापर युग में
4.	हिरण्यवती	भूतसंकुल
5.	क्षत्रिय	पद्मावती
6.	सोत्साहघनम्	पद्मारति

4.3 त्यागी कौन?

4.3.1 पूर्व पीठिका

जहाँ धर्म वहाँ विजय। अर्थात् जहाँ धर्म है वहाँ विजय निश्चित ही है। इस कथा में वह मदन सेना अपने वचन की सत्यता के पालन के लिए अपने पति से क्षमा और अनुमति माँगती है। और चौर दुर्जन है ऐसा जानकर भी वचन के पालन के लिए पुनः उसके समीप गई। इसलिए इस कथा के अध्ययन से सत्य का पालन सदैव और हमेशा करना चाहिए ऐसा विवेक प्राप्त होता है। और अपने वचनों से बंधी सती उस मदन सेना ने अपने पति से मन की इच्छा को कह दुःख को भी स्वीकार किया। इससे उसके पिता के कुल के प्रति और अपने कुल के प्रति भी श्रद्धा दिखाई देती है। और यहाँ चौर का त्याग भी मुख्य है।

4.3.2 विभाग-1

ततश्च स राजा पुनः शिंशपामूलं गत्वा तं वेतालं तथैव स्कन्धमारोप्य सत्वरं कृतमौनः समुच्चाल। प्रयानतंच तं स्कन्धवर्ती स वेतालोऽपृच्छत- राजन्, श्रान्तोऽसि, तदिमां श्रान्तिहारिणीं कथां श्रृणु-

आसीद् वीरबाहुर्नाम सकलभूपालषिरःसमभ्यर्चितषासनः पाकशासन इवापरो नृपतिः, तस्यानंगपुरं नाम नगरवरमभवत्। तत्रार्थदत्तो नाम महाधनः सार्थवाहः प्रतिवसति स्म, तस्य धनदत्तो नाम ज्येष्ठः पुत्रः कनीयसी

च कन्या मदनसेना नाम समजायत। एकदा धम्मदत्तो नाम कस्यचिद् वणिक्पतेस्तनयः तां लावण्यरसनिर्झरां कुचकुम्भाग्रबलित्रितयरंजितां यौवनद्विरदस्येवलीलामञ्जनवापिकां वीक्ष्य सद्यः स्मरबाणौघपातापहृतचेतनः समपद्यत,- अहो! मारेण धाराऽधिरूढेन अमुना रूपेण द्योतिता मल्ली में हृदयं भेत्तुमिव निर्मिता। इत्येवं प्रासादाग्रमारूढां तां दृष्टवा चिन्तयतः चक्राह्वस्येव तस्य वासरोऽतिचक्राम। ततः सा मदनसेना चितंच तस्य धर्मदत्तस्य तद्दर्शनजनितरागोऽपराम्बुधौ निपपात। तांच सुमुखीं नक्तम् अभ्यन्तरागतां दृष्टवा तन्मुखाब्जविनिर्जितश्चन्द्रः शनैरुदगात। धर्म्मदत्तश्च तावद् गृहं गत्वा तामनुचिन्तयन् शयने चन्द्रपादाहतो लुठन् निपत्य तस्थौः, यत्नेन सखिभिर्बन्धुभिश्च पृच्छयमानो न किंचित कथयामास। निशि च कृच्छ्रात् प्राप्तनिद्रः तथैव तां पष्यन् अनुनयंश्च समुत्सुकः किमिव नाकरात्, प्राप्तश्च प्रबुद्धो गत्वा रहसि स सखीं प्रतीक्षमाणम् उद्यानवर्त्तिनीं मदनसेनां ददर्श, उपेत्य च परिष्वंगलालसः प्रेमपेशलैर्वचोभिश्चरणानतः उपच्छन्दयामास।

व्याख्या- इसके बाद वह राजा फिर शीशम की जड़ में जाकर उस वेताल को उसी प्रकार कन्धे पर उठा कर मौन धारण किए हुए शीघ्रता से चल दिया। जाते हुए कन्धे पर स्थित उस वेताल ने पूछा राजा थक गए हो, तो परिश्रम दूर करने वाली यह कहानी सुनो।

सभी राजाओं के सिर से सम्मान किए हुए शासन वाला, द्वितीय इन्द्र के समान वीरबाहु नाम का राजा था। उनका अनंगपुर नाम का श्रेष्ठ नगर था। वहाँ बहुत बड़ा अर्थदत्त नाम का वणिक् रहता था। उसका धनदत्त नाम का ज्येष्ठ पुत्र, और मदनसेना नाम की छोटी पुत्री थी। एक बार धर्मदत्त नाम वाला किसी बड़े व्यापारी का पुत्र, उस रूप सौन्दर्य से परिपूर्ण, स्तन कलश के अग्रभाग और त्रिवली से सुशोभित, युवावस्था रूपी हाथी के विलास स्नान के सरोवर के सदृश उस कन्या को देखकर तत्काल ही कामदेव के बाणसमूह के लगने से हतज्ञान हो गया। महल के छत पर चढ़ी हुई उसे देखकर- अरे! कामदेव के द्वारा इस सौन्दर्य से चमकती हुई यह मल्लिका मेरे हृदय को बींधने के लिए ही बनायी गई है। इस प्रकार सोचते हुए उसका चक्रवाक के समान दिन बीत गया।

इसके बाद वह मदनसेना और उस धर्मदत्त का मदनसेना के दर्शन से उत्पन्न दुःखरूपी अग्नि से सन्तप्त मन भी घर के अन्दर प्रवेश किया। उसके दर्शन से ही मानो राग उत्पन्न होने से सूर्य भी पश्चिम समुद्र में गिर गया। उसके मुख कमल से पराजित हुआ चन्द्रमा रात में उस सुन्दरी को घर के अन्दर गई हुई देखकर धीरे-धीरे बाहर निकल आया। और धर्मदत्त भी तब अपने घर जाकर उसी का चिन्तन करते हुए चन्द्रमा के किरण रूपी चरणों से ताड़ित होकर लुढ़कते हुए बिस्तर पर गिर कर लेट गया। यत्न पूर्वक मित्रों के द्वारा तथा बन्धुओं के द्वारा पूछे जाने पर उसने कुछ भी नहीं कहा। फिर रात में बड़ी कठिनाई से निद्रा प्राप्त करने पर उसी प्रकार उसको सपने में देखते हुए उत्सुक होकर अनुनय विनय करते हुए क्या-क्या नहीं किया। प्रातः काल जागकर उसने जाकर एकान्त में सखी की प्रतीक्षा करती हुई वाटिका में स्थित मदनसेना को देखा और उसके पास पहुँच कर आलिंगन के अभिलाषी हो कर पैरों पर गिरकर प्रेम से कोमल वचनों के द्वारा प्रार्थना की।

सरलार्थः- राजा विक्रमादित्य पहले की तरह ही शीशम के वृक्ष पर जाकर उस वेताल को लाए। उस वेताल ने राजा के परिश्रम के नाश के लिए एक कथा को कहना आरम्भ किया। प्राचीनकाल में वीरबाहु नाम से प्रसिद्ध कोई राजा था। वह सुरलोक के इन्द्र के समान सभी राजाओं का पूजनीय था। वह अनंगपुर नाम के प्रसिद्ध नगर में रहता था। उस नगर में अर्थदत्त नामक महान धनी व्यापारी रहता था। उसके पुत्र का नाम धनदत्त तथा कन्या का नाम मदनसेना था। धनदत्त का सखा धर्मदत्त ने एक दिन उस मदनसेना को देखा। एक बार देखकर ही वह उसके प्रेम में पड़ गया। उसे प्राप्त करने के लिए उसके मन में आकांक्षा प्रबल हुई। रात्रि में उसके विरह की वेदना से वह सो नहीं सका। चन्द्रकिरणें भी उसे अपने समीप वेदनीय प्रतीत हो रही थी। दूसरे दिन सुबह उद्यान में उसे देखकर उसके समीप जाकर अपनी अभिलाषा को कहा।

पाठ-4

वेताल पच्चीसी-1

ध्यान दें:

ध्यान दें:

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- सकलभूपालशिर:समभ्यर्चितशासन: -बहुव्रीहि समास।
- पाकशासन: - पाक: असुरविशेष:, तस्य शासन: निहन्तापाकशासन: इन्द्र:।
- लावण्यनिर्झराम् - षष्ठी, तत्पुरुष समास।
- कुचकुम्भाग्रबलित्रितयरंजिताम् - तृतीया, तत्पुरुष समास।
- लीलामज्जनवापिकाम् - चतुर्थी, तत्पुरुष समास।
- स्मरबाणौघपातापहृतचेतन: - बहुव्रीहि समास।
- अतिचक्राम् - अति + क्रम धातुलिट् + तिप् + णल्।

4.3.3 विभाग-2

साब्रवीत् - अहं कन्या, साम्प्रतं ते परदाराश्च, यतोऽहं पित्रा समुद्रदत्ताय वणिजे वाचा दत्ता, कतिपयैरेव दिनैर्विवाहो में भविता, तत् तूष्णीं गच्छ, मा कश्चित् पश्येत्, ततो दोषो भवेत्। इत्युक्तस्तया त्यक्तश्च स धर्मदत्तस्तां जगाद - 'सुन्दरि! यदस्तु, त्वां विना नाहं जीवेयम्।' तदाकर्ण्य सा वणिकसुता कन्याभावदूषणभयाऽऽकुला तनुवाच, - तर्हि विवाहो में तावत् सम्पद्यतां, पिता में चिरकांक्षितं कन्यादानफलं लभतां, ततोऽहं त्वां निश्चितं प्रणयेन समुपेष्यामि'। तदाकर्ण्य सोऽब्रवीत्- 'अन्यपूर्वा मम प्रिया नेष्टा, परभुक्ते कमले विमलेऽपि किं रतिर्जायते? इति तेनाभिहिता साऽवादीत् - तर्हि कृतोद्वाहैव पूर्वं त्वामुपयास्यामि, तत: पतिम् इति। एवमुक्तवतीं तां वणिकपुत्रीं प्रत्ययार्थं शपथेन सत्येन स धर्मदत्त: सम्बन्ध। ततस्तेनोज्झिता सा समुद्विग्ना स्वं मन्दिरं विवेश।

व्याख्या- उस मदनसेना ने कहा, मैं कुमारी हूँ और इस समय तुम्हारे लिए परदारा हूँ, क्योंकि पिता के द्वारा मैं समुद्रदत्त नामक वणिक् को वचन के द्वारा दे दी गई हूँ। कुछ ही दिनों में मेरा विवाह होगा। इसलिए चुपचाप चले जाओ, कोई देखे न, नहीं तो दोष होगा। उसके द्वारा यह कहे गए और परित्याग किए हुए उस धर्मदत्त ने उसे कहा- हे सुन्दरी! जो कुछ हो, मैं तुम्हारे बिना नहीं जी सकता हूँ। यह सुनकर अपने कौमार व्रत के नष्ट होने के भय से व्याकुल हो कर उस वणिकपुत्री ने उसे कहा तो मेरा विवाह हो जाए, मेरे पिता बहुत दिन से वांछित फल को प्राप्त कर लें, तब मैं निश्चित ही प्रेम से तुम्हारे पास आऊँगी। यह सुनकर वह बोला पहले अन्य किसी के द्वारा स्वीकृत प्रिया की मुझे आकांक्षा नहीं है, स्वच्छ रहने पर भी दूसरे के उपभोग किए हुए कमल में आनन्द मिलता है क्या। उसके द्वारा ऐसा कहने पर उसने कहा तो विवाह होते ही पहले तुम्हारे पास आऊँगी तब पति के पास जाऊँगी। इस प्रकार कहने वाली उस वणिकपुत्री को विश्वास के लिए शपथ के द्वारा तथा सत्य के द्वारा उस धर्मदत्त ने अच्छी तरह बाँध लिया। तब उससे मुक्त हुई उसने उद्विग्न होकर अपने भवन में प्रवेश किया।

सरलार्थ:- तब उसने कहा कि वह कन्या है उसका विवाह नहीं हुआ। और समुद्रदत्त के साथ उसका विवाह भी निश्चित है। इसलिए यह सम्भव नहीं है। तब उसने कहा कि यदि उसे प्राप्त नहीं करता है तो वह जीवित नहीं रहेगा। तब उसका चरित्र दूषित होगा इससे व्याकुल होकर उसने कहा कि विवाह के बाद वह उसके समीप आयेगी। तब वह बोला कि किसी के भी द्वारा पूर्व स्वीकृत प्रिया को वह स्वीकार नहीं करेगा। फिर वह अन्य वचन देती है कि विवाह के बाद सबसे पहले धर्मदत्त के समीप आयेगी, फिर समुद्रदत्त के पास जाएगी।

ध्यान दें:

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- अन्यपूर्वा -बहुव्रीहिसमास।
- कृतोद्वाह - कृतः सम्पादितः उद्वाहः परिणयः यस्याः सा कृतोद्वाहा सम्पन्नविवाहव्यापारा।

4.3.4) विभाग-3

अथ प्राप्ते लग्नदिवसे निर्वृत्तोद्वाहमंगला सा गत्वा पतिगृहं, नीत्वा च उत्सवेन वासरं, निशि पत्या समं शयनीयगृहमध्यास्त, तत्र शय्यानिषण्णाऽपि असम्मुखी समुद्रदत्तस्य तस्य पत्युः परिष्वंगं न प्रत्यपद्यत। तेनानुनीयमानाऽपि सा यदा उदश्रुः बभूव, तदा स नाहमस्या अभिमतोऽस्मीति हृदाऽकरोत्, अवादींच-सुन्दरी! यदि तेऽहं नाभिमतः, तत्ते योऽभिमतः, तं सेवितुं गच्छ'। तदाकर्ण्य सा नतमुखी शनैरवादीत् - नाथ! त्वं मे प्राणाधिकः प्रेयान्, किन्तु मे विज्ञप्तिमेकां श्रृणु, सहर्षं मे अभयं प्रयच्छ, शपथंच कुरुष्व, आर्य्यपुत्र! अवक्तव्यमपि ते वदामि'। एवमुक्तवती सा 'तथा' इति कृच्छ्रात् प्रतिपद्यमानं तं सविषादं सलज्जं सभयंचावादीत्- नाथ! एकदा एकाकिनीं गृहोद्याने मां दृष्ट्वा धर्मदत्तो नाम मम भ्रातुः सखा युवा स्मराऽऽतुरः मामरुणत्। अहं परीवादं पितुः कन्यादानफलंच रक्षन्ती हठप्रवृत्तस्य तस्य वाचमयच्छं यत् - पूर्वं विवाहिता त्वामुपेष्यामि, ततः पतिम् इति। तत् प्रभो! मे सत्यं प्रतिपालय, अनुमन्यस्व मां तदन्तिकगमनाय, तन्निकटं गत्वा क्षणेनागमिष्यामि, न हि आबाल्यसेवितं सत्यमतिक्रमितुं शक्नोमि'। इति तस्याः वचोवज्रपातेन सहसा हतः समुद्रदत्तः सत्येन बद्धः क्षणमचिन्तयत्- अहो धिक्, इयमन्यरक्ता, एतया ध्रुवमेव गन्तव्यं, तत् कथं सत्यं हन्मि। यातु इयं, कोऽस्याः परिग्रहः। इत्यालोच्य तां यथेष्टगमनाय अनुमेने। सापि सहसा समुत्थाय तस्माद् वेश्मनो निरगात्।

व्याख्या- इसके बाद विवाह के लग्न के दिन मिलने पर और वैवाहिक मंगल कार्य हो जाने पर वह उत्सव के द्वारा दिन बिता कर रात्रि में पति के घर में जा कर पति के साथ शयन घर में चली गई। वहाँ शय्या पर रहते हुए भी विमुख होकर उसने अपने पति का आलिंगन नहीं किया। उसके द्वारा अनुनय किए जाने पर जब वह आंसू गिराने लगी तब उसने मन में सोचा मैं इसके मनोनुकूल नहीं हूँ। उसने कहा हे सुन्दरी यदि मैं तुम्हारे मनोनुकूल नहीं तो जो मनोनुकूल है उसके समीप चले जाओ। यह सुनकर सिर झुकाए हुए उसने धीरे से कहा हे नाथ तुम मेरे प्राणों से प्रिय हो, किन्तु मेरी एक प्रार्थना सुनो और प्रसन्नता के साथ मुझे अभय दान दो, और शपथ करो तब तुम्हे कहूंगी। उसने कहा कहो तब उसने लज्जा, विषाद तथा भय के साथ कहा नाथ, एक बार घर के बगीचे में मुझे देखकर धर्मदत्त नाम के मेरे भाई के मित्र ने काम पीड़ित होकर मुझे रोका। अपने अपवाद को तथा पिता के कन्यादान के फल को बचाती हुई मैंने उसको वचन दे दिया कि विवाह होने पर पहले तुम्हारे पास आऊँगी तब पति के पास जाऊँगी। तो हे प्रभु मेरे सत्य की रक्षा करो, इसके लिए अनुमति दो, उसके पास जाकर कुछ क्षण में वापिस आ जाऊँगी। बचपन से जिस सत्य की सेवा कर रहीं हूँ उसका उल्लंघन नहीं कर सकती। उसके वचन रूपी वज्रघात से आहत हो सत्य से बंधे हुए समुद्रदत्त ने क्षण भर सोचा, अरे धिक्कार है यह अन्य पर अनुरक्त है, यह तो अवश्य ही जाएगी। तो क्यों सत्य का उल्लंघन करूँ। यह जाए, इसके ग्रहण का क्या प्रयोजन हैं। ऐसी विवेचना करके उसे अपनी इच्छानुसार जाने की अनुमति दे दी। वह भी एकाएक उठकर उस घर से बाहर निकल गयी।

सरलार्थः- विवाह के बाद उसी रात्रि पति के पास जाकर उसने रोना आरम्भ किया। जब समुद्रदत्त ने कारण पूछा तब उसने अपने विवाह से पूर्व वृतान्त को उससे कहा। समुद्रदत्त ने देखा कि उसकी अन्य में प्रीति है। मेरे में नहीं। इसलिए इसका अवरोध नहीं करता। इस कारण उसे शीघ्र जाने की अनुमति दे दी। वह भी अनुमति को प्राप्त कर धनदत्त के समीप जाने के लिए घर से निकल गयी।

ध्यान दें:

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- लग्नदिवसे - तृतीया, तत्पुरुष समास।
- उदश्रुः - बहुव्रीहि समास।
- हठप्रवृत्तस्य - सप्तमी, तत्पुरुष समास।
- वचोवज्रपातेन - षष्ठी, तत्पुरुष समास।
- अन्यारक्ता - सप्तमी, तत्पुरुष समास।

4.3.5) विभाग-4

अथ सा यन्ती मदनसेना निशि मार्गे एकाकिनी केनापि चौरेण प्रधाव्य वसनांचलाद् रुरुधे, ऊचे च बिभ्यती सा,- का त्वं सुभ्रु। क्क यासि इति। साऽवादीत् - मुंच मां किं तवानेन प्रसंगेन कार्यमस्ति मे। ततश्चौरोऽब्रवीत् - सुन्दरि, चौरात् मत्तः कथं त्वं मुच्यसे। तदाकर्ण्य सावदत्गृहाण मे आभरणानि। ततश्चौरः अभ्यधाम् - शोभने, किमेभिरुत्पलैः। चन्द्रकान्तानना जगदाभरणभूतां भवतीं नैवाहं त्यजामि। इति तेनोक्ता विवशा सा वणिङ्नन्दिनी निजवृत्तान्तमाख्याय तमेवं प्रार्थयामास - भद्र, क्षणम् अपेक्षस्व, यावत् सत्यमनुपालयामि। एतदाकर्ण्य चौरस्तां सत्यसन्धां मत्वा मुमोच, तस्थौ च तत्र तदागमं प्रतीक्षमाणः। सापि तस्य धर्मदत्तस्य वणिजोऽन्तिकमाजगाम। स च धर्मदत्तस्ताम् अभीष्टां प्राप्तां दृष्टवा यथावृत्तं पृष्ट्वा विचिन्त्य च क्षणमब्रवीत्- सुन्दरि, सत्येनते पुष्टोऽस्मि, त्वया परस्त्रिया मे नास्ति प्रयोजनम्। यावत् त्वां कश्चिन्नेक्षते, तावत् यथागतं गम्यताम् इति तेन त्यक्ता सा तथेति तद्गेहात् प्रत्यागमत्। अथ पथि चौरस्य प्रतिपालयतो निकटं प्राप्य-ब्रूहि, कस्ते वृत्तान्तस्तत्र गतायाः। इति पृच्छते तस्मै सा तेन वणिजा यथोक्तं तत् सर्वमाख्यातवती। ततः चौरस्तामवादीत् - यद्येवं, तत् मयापि सत्यतुष्टेन विमुक्तासि, साम्प्रतं साभरणा गृहं व्रज इति। एवं तेनापि सन्त्यक्ता रक्षिता अनृणा अलुप्तशीलमुदिता पत्युरन्तिकमाययौ। तत्र गुप्तं प्रविष्टा प्रहृष्टैवागता पृष्टा तस्मै पत्ये तत् सर्वं यथावद् अवर्णयत्। सोऽपि अम्लानमुखकान्तिमसम्भोगलक्षणम् अनष्टचारित्रां सत्यपालनगताम् अदुष्टमानसां सम्भाव्य अभिनन्द्य च तया सह यथासुखं तस्थौ।

व्याख्या- इसके बाद रात के समय रास्ते में अकेली जाती हुई वह मदनसेना किसी चोर के द्वारा दौड़ कर वस्त्र के आंचल को पकड़कर रोक ली गई। डराते हुए उसने कहा तुम कौन हो, कहाँ जा रही हो। वह बोली मुझे छोड़ दो, इससे तुम्हारा क्या प्रयोजन, मुझे कार्य है। तब चोर ने कहा, सुन्दरी, मुझ चोर से तुम कैसे छोड़ी जाओगी। यह सुनकर उसने कहा मेरे सभी आभूषण ले लो। तब चोर ने कहा हे शोभने इन पत्थरों से क्या लाभ। चन्द्रमा के समान मुख वाली, संसार का आभूषण बनी हुई तुम को मैं नहीं छोड़ सकता। उसके द्वारा कही हुई वह वणिक पुत्री विवश होकर अपना समाचार कह कर उससे इस प्रकार प्रार्थना करने लगी, क्षण भर प्रतीक्षा करो, जब तक मैं सत्य का पालन करती हूँ। यहीं पर रहते हुए तुम्हारे पास शीघ्र ही आऊँगी, मैं इस वचन का उल्लंघन नहीं करूँगी। यह सुनकर चोर ने उसे सत्य प्रतिज्ञा वाली मानकर छोड़ दिया और उसके आगमन की प्रतीक्षा करने लगा। वह भी उस धर्मदत्त वणिक के पास आ गयी। उस धर्मदत्त ने उस प्रियतमा को आई हुई देखकर सब वृत्तान्त पूछ कर कुछ देर सोच कर कहा- हे सुन्दरी तुम्हारे सत्य से मैं सन्तुष्ट हूँ, तुझ परस्त्री से मेरा कोई प्रयोजन नहीं है, जब तक तुम्हें कोई नहीं देखता है, तब तक जैसे आयी हो उसी प्रकार चली जाओ। इस प्रकार उसके द्वारा त्याग की हुई वह वैसा ही करूंगी, यह कहकर उसके घर से वापिस लौट गयी।

इसके बाद रास्ते में प्रतीक्षा करने वाले चोर के पास पहुंच कर कहो, वहाँ जाने पर क्या वृत्तान्त हुआ यह पूछने वाले उस चोर को उसने बनिए के द्वारा जो कहा गया वह सब कह दिया। तब चोर ने

ध्यान दें:

कहा कि यदि ऐसा है तो सत्य से सन्तुष्ट होने वाले मेरे द्वारा भी तुम छोड़ दी गई हो, इस समय आभरण युक्त तुम अपने घर जाओ। इस प्रकार उसके द्वारा भी सन्त्यक्त और सुरक्षित होकर सत्य से उऋण तथा चरित्र नष्ट न होने से प्रसन्न होकर वह मदनसेना अपने पति के पास आ गयी। वहाँ गुप्त रूप से प्रवेश करके प्रसन्न होती हुई आयी और पूछी गयी तब उसने पति को सारा वृत्तान्त यथावत कह दिया। वह समुद्रदत्त भी उस मदनसेना को प्रसन्न मुख कान्तिवाली, बिना सम्भोग के चिह्नवाली, सुरक्षित चरित्र वाली, सत्यपालन के लिए गई हुई, पवित्र मन वाली होने की सम्भावना करके इस विषय की प्रशंसा करके उसके साथ सुख पूर्वक रहने लगा।

सरलार्थः- जब वह धर्मदत्त के पास आ रही थी तब रास्ते में एक चोर मिला। वह भी उसे जाने की अनुमति नहीं दे रहा था। तब धर्मदत्त के पास से लौटते हुए तुम्हारे पास आऊँगी ऐसा कहकर वह वहाँ से निकलकर धर्मदत्त के पास गयी। इतने दिन बीत जाने पर धर्मदत्त की कामपीड़ा शान्त हो गयी। और वह भी दूसरे की पत्नी है। इसलिए उसने उसे अपने पति के पास जाने के लिए कहा। तब उसके पास से आते समय चोर के पास गयी। चोर ने उसकी सत्य निष्ठा को देखकर प्रसन्न होकर उसे अपने घर जाने के लिए कहा। फिर जब वह पति के पास गयी तब समुद्रदत्त ने देखा कि उसके शरीर पर कहीं भी सम्भोग के चिह्न नहीं है। और उसने सत्य का पालन किया किन्तु अपने पिता की जैसे अवमानना न हो वैसे किया। इससे मदनसेना के ऊपर समुद्रदत्त की प्रीति बढ़ गयी। उसने उसे आदरपूर्वक स्वीकार किया।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- सुभ्रु - सु सुष्ठु शोभने भ्रवौ यस्याः सा सुभ्रूः।
- चन्द्रकान्ताननाम् - बहुव्रीहिसमास।
- जगदाभरणभूताम् - षष्ठी, तत्पुरुष समास।
- सत्यसन्धाम् - बहुव्रीहि समास।
- अनृणा- बहुव्रीहि समास।
- अलुप्तशीलमुदिता - कर्मधारय समास।
- अम्लानमुखकान्तिम् - बहुव्रीहि समास।
- असम्भोगलक्षणाम् - बहुव्रीहि समास।
- अनष्टचारित्राम् - बहुव्रीहिसमास।
- सत्यपालनगताम् - चतुर्थी तत्पुरुष समास।
- अदुष्टमानसाम् - बहुव्रीहिसमास।

4.3.6) विभाग-5

इति कथामुक्तवा स वेतालस्तं भूपं पृच्छति स्म- राजन्, पूर्वोक्तं शापमनुस्मृत्य ब्रूहि, एषां चौरवणिजां मध्ये कः त्यागी। इति। तदाकर्ण्य स राजा मौनं विहाय तं वेतालमाह स्म- एषां चोरस्त्यागी, न पुनरुभौ तौ वणिजौ। यो हि पतिस्ताम् अत्यज्यां विवाह्यापि अजहात्, स कुलजः सन् अन्यासक्तां भार्यां जानन् कथं वहति। योऽपि अपरः, स भयात्। अथवा कालेन जीर्णासक्तिवेगात् तामत्याक्षीत्। चोरस्तु गूढचारी निरपेक्षः पापी, प्राप्तं साभरणं स्त्रीरत्नं यदमुंचत्, तेन स एव त्यागी इति। एतदाकर्ण्यैव स वेतालः पूर्ववत् स्वं पदमगात्,

ध्यान दें:

राजापि पुनस्तमानेतुं सयत्नोऽभवत्।

व्याख्या- यह कथा कहकर उस वेताल ने राजा से पूछा, राजा पहले कहे गए शाप का स्मरण करके कहो कि इन चोर तथा दोनों बनियों में से कौन अधिक त्यागी है। यह सुनकर उस राजा ने मौन त्याग कर वेताल से कहा- चोर ही त्यागी है वे दोनों वणिक् नहीं। जो पति था उसने विवाह करके भी न त्यागने योग्य उस पत्नी को दूसरे के पास जाने के लिए छोड़ दिया। वह अच्छे कुल में उत्पन्न होकर दूसरे पर आसक्त पत्नी को जानते हुए भी कैसे ग्रहण करें। जो दूसरा था उसने भय से अथवा कुछ समय बीत जाने के कारण आसक्ति के वेग के क्षीण हो जाने से उसे छोड़ दिया। चोर तो गुप्त रूप से विचरण करने वाला, किसी की अपेक्षा नहीं रखने वाला पापी था, उसने जो मिले हुए आभरण सहित स्त्री रत्न को छोड़ दिया, इससे वही सबसे बड़ा त्यागी था। यह सुनते ही वेताल पहले की तरह अपने स्थान शीशम के वृक्ष पर चला गया। राजा भी फिर उसको लाने के लिए प्रयत्न करने चला गया।

सरलार्थः- इस प्रकार कथा को सुनाकर वेताल ने पूछा कि चोर, समुद्रदत्त, धर्मदत्त के बीच कौन त्यागी है। तब विक्रमादित्य ने उत्तर दिया कि चोर ही त्यागी है। क्योंकि समुद्रदत्त ने उसे दूसरे पुरुष पर अनुरक्त है जानते हुए भी जाने की अनुमति दे दी। धर्मदत्त ने दूसरे की पत्नी का उपभोग पाप होगा इस डर से उसे अपने पति के पास जाने के लिए कहा। चोर की वह पत्नी भी नहीं थी, न ही उसके मन में पाप का डर था। वह आभरण से युक्त, रूप यौवन से सम्पन्न सुन्दरी मदनसेना को प्राप्त करके भी उसे अपने घर जाने के लिए कहा। इसलिए वह ही त्यागी है। फिर वेताल विक्रमादित्य से उचित उत्तर को प्राप्त करके पुनः शीशम के वृक्ष पर चला गया।

4.3.7) द्वितीय कथा का तात्पर्य

यहाँ वेताल ने विक्रमादित्य को कथा कहकर सत्य मार्ग के अवलम्बन की महत्ता को वर्णित किया है। उसने कथा में कहा की अनंगपुर नामक नगर में अर्थदत्त नामक व्यापारी रहता था। उसकी पुत्री थी मदनसेना, पुत्र धनदत्त था। एक बार वह उद्यान में थी। तब उसके भाई के मित्र धर्मदत्त ने उसे देखा। उसे प्राप्त करने के लिए वह इच्छित हुआ। तब उसने कहा कि समुद्रदत्त के साथ उसका विवाह होना है। उसने उसके वाक्य को कैसे भी नहीं सुना। तब वह उसे वचन देती है कि विवाह के बाद पहले उसके पास आयेगी तब पति के पास जाएगी। इस प्रकार सुन सन्तुष्ट होकर वह घर को गया। फिर जब मदनसेना का विवाह हुआ तब विवाह के बाद वह पति की अनुमति स्वीकार कर धर्मदत्त के पास आती है तब रास्ते में एक चोर उसे पकड़ लेता है। तब उसे भी वह वचन देती है कि आते हुए उसके पास आयेगी और उसके वचन को सुनेगी। फिर जब वह धर्मदत्त के पास गयी तब उसने सोचा कि यह पर स्त्री है। इसलिए घर जाने के लिए उसे कहा। फिर जब चोर के पास आयी तब उसके सत्य पालन को देखकर उसने भी उसे घर जाने के लिए कहा। फिर उसके पति ने सारे वृत्तान्त को सुनकर और उसके सतीत्व को जानकर आनन्दित होकर उसे प्रसन्नता से स्वीकार किया। इस कथा को सुनाकर वेताल ने राजा को पूछा कि उनमें से त्यागी कौन है। तब राजा ने कहा कि धर्मदत्त ने पाप के भय से उसे घर जाने के लिए कहा। उसके पति ने अन्य में आसक्त है ऐसा मानकर उसे जाने के लिए अनुमति दी। परन्तु चोर ने उसकी सत्यता को देखकर उसे घर भेजा। इसलिए वह चोर ही स्वाभाविक त्यागी है। सम्यक् उत्तर को प्राप्त करके वेताल पुनः श्मशान की ओर चला गया।

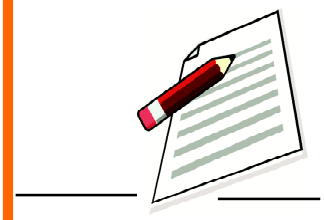

ध्यान दें:

पाठगत प्रश्न

1. वेताल कहाँ रहता था?
2. अनंगपुर के राजा का क्या नाम है?
3. वणिक का नाम क्या था?
4. वणिक के पुत्र का नाम क्या है?
5. धनदत्त की बहन का क्या नाम है?
6. कौन मदनसेना के प्रेम में पड़ गया?
7. मदनसेना के पति का क्या नाम है?
8. धर्मदत्त ने कहाँ से मदनसेना को अपने पति के पास जाने के लिए कहा?
9. क्या देखकर चोर ने उसे छोड़ दिया?
10. उनमें से कौन त्यागी है राजा के मत में?
11. स्तम्भ-1 को स्तम्भ-2 से मिलाओ-

स्तम्भ-1	**स्तम्भ-2**
अनंगपुरस्य नृप	धनदत्तः
वणिज पुत्रः	अनंगपुरम्
धनदत्तस्य भगिनी	धर्मदत्तः
धनदत्तस्य सखा	वीरबाहुः
त्यागी	मदनसेना
मदनसेनायाः गृहम्	चोरः

12. सभी राजाओं के सिर से सम्मान किए हुए शासन वाला, ... के समान वीरबाहु नाम का राजा था।
13. अर्थदत्त .....रहता था?
14. अर्थदत्त का .....नाम का ज्येष्ठ पुत्र था
15. राजन् थक गए हो तो.....कहानी सुनो
16. .....नाम का सभी राजाओं द्वारा सम्मानित इन्द्र के समान राजा था।
17. अनंगपुर नगर में .....नाम का महाधनी बनिया रहता था।
18. उसके धनदत्त नाम का ज्येष्ठ पुत्र और छोटी कन्या ..... उत्पन्न हुए।
19. मैं कुमारी हूँ और इस समय तुम्हारे लिए परदारा हूँ, क्योंकि मैं पिता के द्वारा .....नामक वणिक को वचन के द्वारा दे दी गई हूँ।

पाठ-4

वेताल पच्चीसी-1

ध्यान दें:

20. मेरे पिता बहुत दिनों से आकांक्षित.....प्राप्त कर लें।

21. दूसरे के उपभोग किए गए कमल में..... मिलता है क्या।

22. सुन्दरी, मुझ.....से तुम कैसे छोड़ी जाओगी।

23. मिले हुए आभरण सहित..... को छोड़ दिया, इससे वह ही त्यागी है।

पाठ सार

इस पाठ में वेताल पंचविंशति इस ग्रन्थ से दो कथाओं को लिया गया है। उन कथाओं को पढ़ने से साहित्य गुणों का परिचय होता है। और इसमें कन्यादान के विषय में, सत्य की रक्षा के विषय में और योग्यवर कौन है इस विषय का वर्णन विहित है। प्रथम कथा में अनंगरति को प्राप्त करने के लिए चार व्यक्ति आए- एक ब्राह्मण, एक क्षत्रिय, एक वैश्य, और एक शूद्र। उनमें से कौन उसे प्राप्त करेगा राजा से पूछा। तब राजा ने कहा कि क्षत्रिय ही उसे प्राप्त कर सकता है। यहाँ कन्यादान को किसके लिए किया जाए इस विषय में चर्चा विहित है।

द्वितीय कथा में मदनसेना ने धर्मदत्त को वचन दिया। इसलिए वचन की सत्यता के पालन के लिए अपने पति को भी क्षण भर रोक कर वचन पालन के लिए गयी। रास्ते में चोर मिल गया। उसे भी वचन दे दिया। धर्मदत्त और चोर ने उसकी सत्यता रक्षण को देखकर उसे घर को जाने के लिए कहा। पति ने भी उसके सतीत्व सत्यता रक्षण को देखकर उसे आनन्द से स्वीकार किया। यहाँ किसी को भी वचन दें तो कैसे भी उसकी रक्षा करनी चाहिए यह उपदेश प्राप्त होता है।

आपने क्या सीखा

1. उत्साह से भरे हुए वीरों के हृदय में कष्ट कभी भी अवसर प्राप्त नहीं करता है।

2. बचपन से सेवित सत्य का उल्लंघन नहीं कर सकते हैं।

योग्यता विस्तार

- सन्दर्भ ग्रन्थ का परिचय

विद्या चर्चा करने से बढ़ती है। इसलिए विद्या का जब तक अध्ययन करते हैं, तब तक वह विद्या सुदृढ़ होती है। इस पाठ में यदि पाठक को पढ़ने की अधिक इच्छा है तो- पण्डित दामोदर झा महोदय की व्याख्या सहित चौखम्बा विद्याभवन से प्रकाशित वेताल पंचविंशति ग्रन्थ को पढ़ें। उस ग्रन्थ में पच्चीस कथा वर्णित है। और उस ग्रन्थ में हिन्दी भाषा में इन कथाओं की व्याख्या भी मिलती हैं।

भाव विस्तार

1. इस पाठ में विक्रमादित्य की धीरता के विषय में ज्ञात होता है। सौ बार कार्य में सफलता न भी हो तो भी फिर एक बार प्रयत्न करना चाहिए, उस कार्य को नहीं छोड़ना चाहिए- यह बोध होता है।

2. इन कथा को नाटक के रूप में मंचादि पर मंचन कर सकते हैं। उससे भाषा का विस्तार भी होगा, सभी को ज्ञान भी होगा।

ध्यान दें:

3. एक पत्रिका मिलती है उसका नाम है चन्दा मामा। उस पत्रिका की प्रत्येक संख्या में वेताल पच्चीसी की कथा प्रकाशित करते हैं। वहाँ उसके जैसी कथा भी मिलती हैं। उससे छात्र अधिक कथा ग्रन्थों को पढ़ सकते हैं।
4. वेताल पंचविंशति की अनेक कथा युट्युब पर पिक्चर के रूप में अथवा नाटक के रूप में मिलती हैं। उसे भी छात्र देख सकते हैं।
5. अनेक दूरदर्शन चलाने वाली संस्था धारावाहिक के रूप में प्रत्येक रविवार को वेताल पंचविंशति की कथा दिखाते हैं। उसे भी सभी देख सकते हैं।
6. यहाँ जो कथा दी गई है उनमें कौन नायक है। और किस प्रकार के गुणों का प्रकाशक है। उसके गुण को यदि हम स्वीकार करेंगे, जैसा नायक व्यवहार करता है वैसा अनुसरण करेंगे तो हमें अवश्य ही लाभ होगा।

भाषा विस्तार

1. यहाँ बहुत से अल्पसमास युक्त शब्द हैं। उनकी तालिका बनानी चाहिए। उस तालिका को पढ़ने से नवीन शब्दों का ज्ञान समास बोध सरलता से होता है।
2. नए सुबन्त शब्दों के रूप को जानने में योग्यता विस्तार होगा।
3. नए तिङन्त शब्दों के लट्लकार में, लङ्लकार में, लृट्लकार में, विधिलिङ्लकार में, लुट्लकार में, और लुङ्लकार में रूप पत्र पर लिखकर अभ्यास करना आवश्यक है।
4. जो अव्यय शब्द दिखाई दे उनकी भी तालिका को प्रस्तुत करना चाहिए। स्वयं जब कोई भी उत्तर लिखें तब इनका प्रयोग करना चाहिए।

पाठान्त प्रश्न

1. राजा वीरदेव के सन्तान प्राप्ति वृत्तान्त को और उनके नाम लिखो?
2. चारों विज्ञानी के परिचय को दो?
3. विक्रमादित्य ने कैसे कहा कि खड्गधारी को कन्या दो, युक्ति सहित वर्णित कीजिए?
4. कैसे मदनसेना धर्मदत्त को वचन देने के लिए बाध्य हुई सवृत्तान्त वर्णित कीजिए?
5. उसके गमन वृत्तान्त को वर्णित कीजिए?
6. चोर ने क्या सोचकर और कहकर उसे अपने घर जाने के लिए कहा?
7. विक्रमादित्य के मत में चोर कैसे त्यागी है, वर्णित कीजिए?
8. सत्यपालन करते हुए मदनसेना के सतीत्व की कैसे रक्षा हुई, वर्णन कीजिए?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-1

1. भूत प्रेतों से भरे हुए।

पाठ-4

वेताल पच्चीसी-1

ध्यान दें:

2. वीरदेव
3. पद्मावती
4. भोगवती
5. द्वापर युग में
6. उज्जयिनी
7. पद्मारति
8. शिव के
9. शूरदेव
10. अनंगरति
11. सुन्दर और जो युवक पूर्ण विज्ञान को जानता हो उस जैसा।
12. पंचफुट्टिक
13. पांच
14. भाषाज्ञ
15. मृगादि पशुओं और पक्षियों
16. खड्गधर
17. जीवदत्त
18. वह मृत प्राणी को जीवित करता था
19. खड्गधारी क्षत्रिय को
20. उत्साह से भरे वीर हृदय को
21. शीशम के वृक्ष पर, वेताल को
22. श्मशान में
23. उज्जयिनी
24. वीरदेव
25. मन्दाकिनी को
26. शूरदेव
27. अनंगरति के
28. अत्यन्त लज्जा जनक
29. परितुष्टश्चासौ शंकरश्चेति परितुष्टशंकरः इति। कर्मधारय समास।
30. पंचफुट्टिक
31. भाषाज्ञ

32. खड्गधर

33. जीवदत्त

34. सौ बार

35. समय बर्बाद करने के लिए

36. वीर के हृदय में

37. स्तम्भ मेल

1. भूत से भरे हुए
2. पद्मावती
3. पद्मारति
4. द्वापर युग में
5. खड्गधर
6. वीर हृदय को

उत्तर-2

1. शीशम के वृक्ष पर
2. वीरबाहु
3. अर्थदत्त
4. धनदत्त
5. मदनसेना
6. धनदत्त का सखा धर्मदत्त
7. समुद्रदत्त
8. परस्त्री भोग के पाप को स्मरण करके।
9. सत्यता
10. चोर

11. स्तम्भमेलन

1. वीरबाहु
2. धनदत्त
3. मदनसेना
4. धर्मदत्त
5. चोर
6. अनंगपुर

ध्यान दें:

पाठ-4

वेताल पच्चीसी-1

ध्यान दें:

12. पाकशासन
13. अनंगपुरी में
14. धनदत्त
15. परिश्रम को दूर करने हेतु
16. वीरबाहु
17. अर्थदत्त
18. मदनसेना
19. समुद्रदत्त के लिए
20. कन्यादान के फल को
21. आनन्द
22. चोर से
23. स्त्री रत्न को